International Journal of Sanskrit Research 2017; 3(4): 274-278

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2017; 3(4): 274-278
© 2017
www.anantaajournal.com
Received: 18-05-2017
Accepted: 20-06-2017

डॉ. कृष्णमोहन पाण्डेय
असिस्टेण्ट प्रोफेसर, सनातन धर्म आदर्श महाविद्यालय, डोहगी, ऊना, हिमाचल प्रदेश, भारत।

Correspondence
डॉ. कृष्णमोहन पाण्डेय
असिस्टेण्ट प्रोफेसर, सनातन धर्म आदर्श महाविद्यालय, डोहगी, ऊना, हिमाचल प्रदेश, भारत।

विश्व के महानतम यायावर – कृष्णद्वैपायन व्यास

डॉ. कृष्णमोहन पाण्डेय

प्रस्तावना

ज्ञान और विज्ञान के वैदुष्य की पराकाष्ठा का उदात्त प्रतिमान कृष्णद्वैपायनव्यास भारतीय इतिहास का एक ऐसा नाम है जिसका विश्व के किसी भी साहित्य में कोई पर्याय नहीं। व्यास की और्ध्विक गति जितनी उदात्त है लौकिक गति उतनी ही विशाल है। मनुष्यों की आदिकाल से गतिमान समस्त सांस्कृतिक परम्परा का आमूलचूल विवरण प्रस्तुत करने वाला विश्व का महानतम यायावर अद्वितीय महाकवि कृष्णद्वैपायन व्यास सम्पूर्ण चराचर जगत् का आदिम ज्ञाता है। महर्षि व्यास अपने से पूर्वकालिक सम्पूर्ण भारतीय ऋषि परम्परा को अपने हाथ में रखे पिण्ड की तरह देखने वाले हैं। इतिहासपुराणानामुन्मेषं निर्मितं च यत्। भूतं भव्यं भविष्यं च त्रिविधं कालसंज्ञितम्।। (आदि पर्व 1.63) जीवन के सर्वस्व अनुभवों का सार प्रस्तुत करते हुये जब वे महाभारत और पुराणों का व्याख्यान करते हैं तो उनके मुख से ऐसी गर्वोक्ति निकलती है जो आने वाली अनन्त पीढ़ियों के लिए चुनौती ही रह गयी है–'धर्मे अर्थे च कामे च मोक्षे च भरतर्षभ। यदिहास्ति तदन्यत्र यन्नेहास्ति न तद्क्वचित्। महाभारत की ये पंक्तियाँ व्यास के अपरिमित ज्ञान और अपार अनुभव का प्रत्याख्यान करती हैं। अपने विशालकाय ग्रन्थ के एक लाख श्लोकों में उन्होंने संसार की संस्कृतियों एवं अपसंस्कृतियों का जो सांगोपांग स्वरूप प्रस्तुत किया है वह युग युगान्तर तक अन्वेषणीय और अनुकरणीय है। कौरवों का असभ्य आचरण और पाण्डवों का सदाचार व्यास के ऐतिहासिक ज्ञान के तराजू के दो पक्ष हैं। यथार्थ रुप में कौरव और पाण्डव तो प्रतीक मात्र हैं। व्यास सम्पूर्ण आदि कालीन सांस्कृतिक विरासत को सर्वसुलभ बनाना चाहते हैं। तात्कालिक भारतीय समाज में व्याप्त व्यावहारिक बर्बरता, चोरी, बेइमानी, ईर्ष्या, हिंसा, पाप, स्त्रियों के प्रति दुर्भाव, कुरीतियों और दुष्प्रवृत्तियों पर कुठाराघात करने के कोई भी उपाय व्यास ने नहीं छोडे हैं। सच्चे अर्थों में व्यास ही भारतीय इतिहास में कलंकित असभ्यताओं का उच्छेदन करके सभ्यता के मार्ग का प्रस्फुटन करने वाले प्रथम पथ प्रदर्शक हैं। 'यत्र विश्वं भवत्येकनीडम्' के परम पोषक हैं।

व्यास के यायावर्य का मूल्यांकन मनुष्य की साधारण बुद्धि से अगम्य है। अष्टादश (मत्स्य, मार्कण्डेय, भविष्य, भागवत, ब्रह्म, ब्रह्मवैवर्त, ब्रह्माण्ड, वायु, वामन, विष्णु, वराह, अग्नि, नारद, पद्म, लिंग, गरुड, कूर्म, स्कन्द) पुराणों का वैशद्य, सृष्टि विद्या के रहस्य बोधन में सर्वविध आदिम सोपान हैं। महाभारत और पुराणों को मिलाकर लगभग 5 लाख श्लोकों में व्यास का प्रातिभ्य प्रदर्शन सर्वलोकातिशायी है। विश्व का कोना–कोना उनकी सूक्ष्मदृष्टि और प्रखर बुद्धि से अवलोकित है। सूर्य का प्रकाश जिस–जिस दिशा और देश में जाता है, उस–उस देश में व्यास की सरल गति है। अपने व्याख्यानों में देश काल और परिस्थितियों का जितना सूक्ष्म विवेचन वे करते हैं वही सूक्ष्म विवेचन आधुनिक काल के लिए उपजीव्य बना हुआ है। पूरे विश्व का मानचित्र उनके काव्य का समन्वित विषय है। दुनिया भर की कुरीतियों, असभ्यताओं और सदाचार की परम्पराओं के सर्वविध स्रोतों का रहस्योद्घाटन करते हुये चिरकाल से अनुसन्धाताओं की जिज्ञासाओं का निरन्तर विराम व्यास की अपरिमित क्षमता है। वेदों के अप्रतिम भाष्यकार आचार्य सायण व्यासोक्त पुराणों को समस्त विद्याओं का भण्डार कहते हुए विद्या स्थान की उपाधि देते हैं।

> न सा विद्या, न तज्ज्ञानं, न तच्छिल्पं न सा कला। न तत्तत्वं हि गहनं पुराणैर्यन्न गीयते ।।
> तत्राप्यसम्भवत्वं यत्, परप्रत्ययबुद्धिभिः। आशङ्क्यते, तदेवात्र समाधाय निरुप्यते।।

इसी प्रकार महर्षि याज्ञवल्क्य ने अपने चतुर्दश विद्याओं की गणना में पुराणों को सर्वप्रथम रखा है। यथा –

पुराणन्यायमीमांसा धर्मशास्त्रांगमिश्रिताः। वेदाः स्थानानि विद्यानां धर्मस्य च चतुर्दश।।

व्यास की सार्वभौमिक दृष्टि से चराचर जगत् का कोई भी कोना अछूता नहीं है। उनके वाग्वैखरी में इतिहास, पुराण, व्याकरण, निरुक्त, छन्द, कल्प, ज्योतिष, पितृविद्या, भूतविद्या, गणितविद्या, दैवविद्या, निधिविद्या, तर्कविद्या, स्थापत्यवेद, गान्धर्ववेद, नीतिशास्त्र, ब्रह्मविद्या, क्षत्रविद्या, नक्षत्रविद्या, आयुर्वेद और गाथा शास्त्रादि अनेक लौकिक और पारलौकिक विषयों का सर्वांगीण विवेचन विद्यमान है। भारतीय मनीषा की औदात्य विचार धारा के अनुसार व्यासों की एक सुदीर्घ परम्परा है। अलग अलग काल में भिन्न–भिन्न व्यास अवतरित होते हैं ऐसी मान्यता है। कूर्म पुराण के अनुसार वर्तमान मन्वन्तर के प्रारम्भिक प्रथम द्वापर में महान विभु स्वायम्भुव मनु को व्यास माना गया है। प्रभु ब्रह्म की आज्ञा से उन्होंने वेद का अनेक प्रकार से विभाजन किया। दूसरे द्वापर में प्रजापति वेदव्यास हुये। तीसरे में शुक्राचार्य व्यास हुये और चौथे में बृहस्पति व्यास हुये। पाँचवें में सूर्य व्यास हुये और छठें में मृत्यु को व्यास कहा गया है। नवें में सारस्वत, दसवें में त्रिधाम, ग्यारहवें में त्रिवृष, बारहवें में शततेजा, तेरहवें में धर्म, चौदहवें में तरक्षु, पन्द्रहवें में त्यारुणि, सोलहवें में धनंजय, सत्रहवें में कृतंजय, अट्ठारहवें में ऋतंजय, उन्नीसवें में भरद्वाज, बीसवें में गौतम, इक्कीसवें में राजश्रवा, बाइसवें में श्रेष्ठ शुष्मायण, तेईसवें में तृणविन्दु, चौबीसवें में वाल्मीकि, पच्चीसवें में शक्ति, छब्बीसवें में पराशर, सत्ताईसवें में महामुनि जातुकर्ण और अठ्ठाईसवें द्वापर युग में पराशर के पुत्र कृष्णद्वैपायन व्यास हुये। (कूर्म पुराण पूर्व विभाग अध्याय 50 का 1 से 10 श्लोक तक)। व्यास की अप्रतिम प्रतिभा उन्हें भगवदवतार के रूप में प्रस्तुत करती है। कूर्म पुराण का यह श्लोक सिद्ध करता है कि पराशर ऋषि को भगवान ईशान की कृपा प्रसाद से कृष्णद्वैपायन की प्राप्ति हुई थी –

आराध्य देवदेवेशमीशानं त्रिपुरान्तकम्। लेभे त्वप्रतिमं पुत्रं कृष्णद्वैपायनं प्रभुम् ।। (पूर्व विभाग 18. 24)

व्यास का शाब्दिक अर्थ है वेदान् विव्यास इति व्यासः। जो वेदों का विभाजन करने वाला है वह व्यास है। व्यास का अवतरण समाज को सृष्टि का रहस्य बताने के लिए ही हुआ है। सर्व प्रथम वेदों का वैशिष्ट्य के अनुसार विभाजन कर लोक लोकान्तर में लोकायित करना व्यास का प्राथमिक अनुग्रह है। पुनः वेदों का विस्तार और उसकी परम्परा का प्रचलन उनका कर्तव्य है। वेदों में वर्णित लौकिक और आध्यात्मिक रहस्यों का उद्घाटन व्यास की स्वाभाविक क्रिया है। इसीलिए व्यास ने कठिन और रहस्यात्मक विषयों को महाभारत और पुराणों के माध्यम से अभिव्यक्त किया है। भारत वर्ष का अनादि काल से चला आ रहा सम्पूर्ण इतिहास जो अनेक बार असभ्यता, बर्बरता और पाशविकता के मार्ग से गुजरता हुए सभ्यता, कुलीनता और मानवता के उन्नत शिखर तक पहुँचा है को व्यास ने अपने व्याख्यान में ऐसा समेटा है कि आने वाले युगों तक की पीढ़ियाँ उन्हीं के अनुसन्धान में अपना समय लगायेंगी।

सृष्टि के संविधान को मनुष्य की वैकासिक यात्रा में कब जोड़ा गया इसका उल्लेख करते हुये महर्षि व्यास जगत् को बताते हैं कि विवाह प्रथा सृष्टि में संस्कारों का आधान करती है। आरम्भिक काल में स्त्री पुरुष संयोग पशुवत स्वेच्छा से होता था। कालान्तर में विवाह प्रथा प्रचलित हुई। महाभारत के आदि पर्व में इस प्रथा के प्रारम्भ की कथा कहते हुये वे बताते हैं कि 'मर्यादेयम् कृता तेन धर्म्या वै श्वेतकेतुना'। (आदि पर्व –122–10–20)। कथा का भाव इस प्रकार है कि उद्दालक ऋषि के पुत्र श्वेतकेतु अपने पिता के पास बैठे थे कि उसी समय एक ब्राह्मण आया और उनकी माता का हाथ पकड़कर कहा 'चलो' 'हम लोग चलें'। श्वेतकेतु को बहुत क्रोध आया। तब पिता ने समझाया कि स्त्रियाँ गौ की तरह होती हैं उनमें स्वैराचार की ही परम्परा है। ऋषि पुत्र पिता के वाक्यों से सन्तुष्ट नहीं हुये, उन्हें ऐसा स्वैराचार अनुचित लगा। तत्क्षण क्रोधित होते हुये वे बोले 'आज से मैं यह नियम बनाता हूँ कि अब मनुष्य समाज में स्त्री पुरुष दोनों में से कोई भी यौन व्यापार में स्वच्छन्दाचरण को प्रश्रय नहीं देगा। मेरे इस नियम का उल्लंघन करने वाले को भ्रूण हत्या का पाप लगेगा।' गार्हस्थ्य धर्म की कर्तव्य निष्ठा इसी पंक्ति बन्धन से सुरक्षित हुई है। मनुष्यों में स्वेच्छाचार व्यास को नापसन्द है। इस प्रकार की पाशविक वृत्ति को व्यास आगे नहीं चलने देना चाहते हैं। सामान्य समाज को जागरुक करना उनकी विशेष पहल है। समाज की इस भ्रष्ट परम्परा का व्याख्यान करने में उन्हें कोई संकोच भी नहीं है। इसी कारण व्यास भारतीय सांस्कृतिक परम्परा के सबसे बड़े आलोचक भी हैं। सांस्कृतिक मर्यादा को प्रतिस्थापित करना व्यास का महनीय प्रयास है। व्यास के काल में भी चोरों और उचक्कों की कमी नहीं है। धन के लिए अधर्म करने वाले भी पर्याप्त हैं। व्यापार में ठगी, स्वार्थ में हत्या, बड़ों का अपमान, आदि अने सामाजिक बुराइयाँ भी समाज का अभिन्न अंग हैं। यह अलग बात है कि इन असामाजिक तत्त्वों के नियन्त्रण के लिए कठोर दण्ड संहिता भी है। (अग्निपुराण 227 वाँ अध्याय) व्यास के स्वस्थ चिन्तन का इससे बड़ा प्रमाण क्या हो सकता है कि वे अपनी दूर दृष्टि से अनन्त काल से चली आ रही सभ्य, असभ्य परम्पराओं को एक नई दिशा देते हुये सर्वत्र दिखाई देते हैं। सभ्यता, संस्कृति, संस्कार, परम्परा, इतिहास, भूगोल, खगोल, लोक, परलोक, पाप, पुण्य, स्वर्ग, नरक, पाताल, देवता, किन्नर, विद्याधर, अप्सरा, राक्षस, पशु, पक्षी, कीट, पतंग, नदियां, समुद्र, पर्वत, पेड़, भूमि, उचित, अनुचित, धर्म, अधर्म, आश्रम, वर्ण, तीर्थ, कर्तव्य, अकर्तव्य, चर, अचर, शिल्प, कला, खाद्य, पेय, लेह्य, चोष्य, वस्त्र, आभूषण, शिक्षण, आर्थिक, सामाजिक, व्यावहारिक, पारमार्थिक क्या कुछ इस ब्रह्माण्ड में हो सकता है, उन सबका सांगोपांग विवेचन प्रस्तुत करके व्यास ने अपने आप को भगवान ही सिद्ध कर दिया है। वेदैश्चतुर्भिः संयुक्तां व्यासस्यादभुतकर्मणः।। (आदिपर्व. 1.21) पुराणों के लक्षण के अनुसार (सर्गश्च प्रतिसर्गश्च वंशो मन्वन्तराणि च। वंशानुचरितं चैव पुराणं पंचलक्षणम्। शुक्रनीति–4.93) ऐसा लगता है कि प्रकृति का सर्वस्व उनकी लेखनी का प्रतिपाद्य है। सर्ग का तात्पर्य है सूक्ष्म तत्वों की रचना तथा उनका विकास, अपक्षय और तिरोभाव। प्रतिसर्ग का अर्थ है स्थूल जगत् की उत्पत्ति, स्थिति और उसका संहार। वंश का अर्थ है ऐतिहासिक व्यक्तियों की वंशपरम्परा। मन्वन्तर का अर्थ है अमुक घटना या अमुक व्यक्ति का समय ज्ञात करने के लिए पौराणिक पद्धति का मन्वात्मक विधान। वंशानुचरित का अर्थ है धर्म संकट के समय न्याय पथ निर्धारण करने में मनुष्य समाज के काम में आने वाले अनेक व्यक्तियों के अनुकरणीय जीवन चरित। ये पांच तत्व मुख्य रूप से पुराणों के वर्ण्य विषय हैं। यह श्लोक ब्रह्माण्ड पुराण, वायु पुराण, मत्स्य पुराण, कूर्म पुराण, शिवपुराण, गरुड, भविष्य, बाराह आदि पुराणों में भी यथावत् लिखा है।

व्यास का भौतिक जगत् का ज्ञान जितना विशालतम है, आध्यात्मिक जगत् का ज्ञान उतना ही सूक्ष्मतम है। दृश्य जगत् किन तत्वों से बना है तथा उन तत्वों का पौर्वापर्य क्या है यह व्यास के बाद आज तक कोई नहीं बता सका। सृष्टि की उत्पत्ति कब और कैसे हुई इन प्रश्नों का उत्तर पुराण ही बताते हैं, इनके अतिरिक्त संसार में कोई ग्रन्थ नहीं। सृष्टि की उत्पत्ति का इतिहास बड़े रोचक ढंग से पुराणों में वर्णित है। आरम्भ में आधुनिक विज्ञानवादी सृष्टि को पांच छः हजार वर्ष पूर्व प्रारम्भ में मानते थे, फिर केलट्विन के मत को लेकर प्रो. बेकर ने छः करोड़ वर्ष सृष्टि की उत्पत्ति बताई। इंग्लैण्ड के विद्वान डॉ. विलियम, मि. एलनसृजि, डॉ. स्मिथ एडवर्ड आदि पृथ्वी की उष्णता की जांच कर पृथ्वी की आयु दस करोड़ तक बताते हैं। फिर आगे अन्य वैज्ञानिकों ने युरेनियम, रेडियम, हीलियम, वोलोनियम आदि अनेक धातुओं के परीक्षणों से पृथ्वी की आयु बीस करोड़ से पच्चीस करोड़ वर्ष पूर्व माने हैं। खींचतान कर कुछ वैज्ञानिक सृष्टि को 30 करोड़ तक ले जाते हैं। इस सृष्टि के समय निर्धारण में कहीं भी वैज्ञानिकों में साम्य नहीं है किन्तु व्यास का

भूगोल और खगोल ज्ञान देखिये। विष्णु पुराण में स्पष्ट लिखते हैं कि –

काष्ठा पंचदशाख्याता निमेषा मुनिसत्तम। काष्ठास्त्रिंशत्कला त्रिंशत्कलामौहूर्तिकौ विधिः । 8
तावत्संख्यैरहोरात्रं मुहूर्तैर्मानुषं स्मृतम्। अहो रात्राणि तावन्ति मासः पक्षद्वयात्मकः । 9
तैः षडभिरयनं वर्षं द्वेऽयने दक्षिणोत्तरे । अयनं दक्षिणं रात्रिर्देवानामुत्तरं दिनम् । 10
चतुर्युगं द्वादशभिस्तद्विभागं निबोध मे ।
दिव्यैर्वर्षसहस्रैस्तु कृतत्रेतादिसंज्ञितम् । 15
प्राच्यते तत्सहस्रं च ब्रह्मणो दिवसं मुने ! । ब्रह्मणो दिवसे ब्रह्मन् मनवस्तु चतुर्दश ।
ब्राह्मो नैमित्तिको नाम तस्यान्ते प्रतिसंचर ।। 22 (विष्णु पुराण प्रथमांश अध्याय 3)

राष्ट्रभाषा में व्यास का भावार्थ इस प्रकार है – आँख की पलक गिरने में जितना समय लगता है उसे निमेष कहते हैं, 15 निमेष की एक काष्ठा, 30 काष्ठा की एक कला, 30 कला की एक घड़ी, दो घड़ी का एक मुहूर्त, 30 मुहूर्त का एक अहोरात्र (दिन और रात) होता है। 30 अहोरात्र का दो पक्ष वाला एक महीना है, छः महीने का एक अयन तथा दक्षिण और उत्तर दो अयनों का एक मानव वर्ष होता है। एक मानव वर्ष देवताओं का एक दिन है। इस प्रकार दिव्य बारह हजार वर्षों की एक चतुर्युगी होती है। एक हजार चतुर्युगी का ब्रह्मा का एक दिन होता है, जिसमें 14 मनु व्यतीत होते हैं। ब्रह्मा का एक दिन समाप्त हो जाने पर प्रलय होता है, वह ब्रह्मा की रात्री है, उसका समय भी दिन के समान है। इस प्रकार 100 दिव्य वर्ष ब्रह्मा की आयु है। सनातनी परम्परा में ब्राह्मणों द्वारा पुराणोक्त विधि से किये जाने वाले संकल्प के आधार पर ब्रह्मा की आयु 50 वर्ष बीतने के बाद दूसरे परार्ध में श्वेत बाराह नामक कल्प में वैवस्वत नामक सातवें मनु के अन्तर में अठाइसवें कलियुग के प्रथम चरण ही चल रहा है। इन सभी व्यतीत हुये कालों की गणना करें तो गत छः मनुवों के 1,84,0320,000 वर्ष तथा इनकी सात सन्धियों के वर्ष 1,20,96000 और सातवें मनु की गत 27 चतुर्युगी के 11,66,40,000 वर्ष तथा गम्यमान अट्ठाइसवीं चतुर्युगी के भुक्त वर्ष 38,93,161 हैं। कुल मिलाकर यह संख्या 1,97,29,49,101 वर्ष होते हैं। इतना समय विक्रमाब्द के अनुसार व्यतीत हो चुका है। वर्तमान में वैज्ञानिको ने सिर्फ 7997 मील ही पृथ्वी का परिमाण निश्चित किया है जो व्यास के अनुसार सिर्फ 1 हजार योजन ही है। विज्ञान धीरे–धीरे आगे बढ़ रहा है, शीघ्र ही व्यास के निकट पहुंचेगे ऐसी आशा है। इस आदिम रहस्य को स्पष्ट रूप से बताने के बाद व्यास ने पृथ्वी के वर्तमान स्वरूप का अस्तित्व भी कब से है इसका भी स्पष्ट उल्लेख किया है। पृथ्वी पर मानव सबसे पहले कहाँ आये उसका सन्दर्भ भी दर्शनीय है।

स्रष्टा की सृष्टि में वेद आदिम ग्रन्थ हैं। वेदों में सृष्टि का क्रम भी बताया गया है। यथा– सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः। पुरुष एवेदं सर्वम्। यत्पुरुषेण हविषा देवा यज्ञमतन्वत। तस्माद् यज्ञात् सर्वहुतः। सामानि जज्ञिरे। तस्मादस्वा आजयन्त ये के चोभयादतः। ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीत्। चन्द्रमा मनसो जातः सूर्यो चक्षो अजायत। इत्यादि (यजुर्वेद)। परमात्मा ने विराट रूप में स्वयं को उत्पन्न कर यज्ञ किया। यह यज्ञ कहाँ हुआ इसका उल्लेख शतपथ ब्राह्मण (14–1/1/2) में है कि तस्मादाहुः कुरुक्षेत्रं देवानां देवयजनम्। ऐसा ही एक उल्लेख ताण्ड्य ब्राह्मण में भी है कि –एतावती वाव प्रजापतेर्वेदिर्यावत्कुरुक्षेत्रम् (25/13/3)। तात्पर्य यह है कि आदि सृष्टि कुरुक्षेत्र में ही हुई। कुरुक्षेत्र को देवताओं का देवयजन कहते हैं। कालान्तर में कुरुक्षेत्र के निकटवर्ती क्षेत्र को ब्रह्मवर्त नाम से जाना गया है जिसका उल्लेख मनु करते हैं –

कुरुक्षेत्रं च मत्स्याश्च पांचालाः शूरसैनिकाः। एष ब्रह्मर्षि देशो वै ब्रह्मावर्तादनन्तरः। (2.18)

यही कुरुक्षेत्र मनुष्यों के आदिम क्षेत्र हैं जहाँ सदाचार का विकास हुआ है। संसार को इन्होंने ही सभ्यता सिखाई है –

तस्मिन्देशे य आचारः पारम्पर्यत्रमागतः। वर्णानां सान्तरालानां स सदाचारः उच्चते ।। (2.19)
एतद्देशप्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मनः। स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन् पृथिव्यां सर्वमानवाः ।। (2.20)

मनुष्यों के आदिम मनु भी इसी ब्रह्मावर्त में निवास करते हैं। महर्षि व्यास भागवत् पुराण में लिखते हैं कि ब्रह्मावर्तं योऽधिवसंशास्ति सप्तार्णवां महीम्। (3.21.25) अर्थात् सात समुद्रों से घिरी पृथ्वी का इसी ब्रह्मावर्त में रहते हुये मनु शासन करते हैं। सृष्टि की उत्पत्ति का आदिम रहस्य व्यास ही बताते हैं। उनके अनुसार सृष्टि नवधा होती है। प्राकृताश्च त्रये पूर्वे सर्गास्तेऽबुद्धिपूर्वकाः। बुद्धिपूर्वं प्रवर्तन्ते मुख्याद्याः पंचवैकृताः। (शिवपुराण 1.12.18) अर्थात् प्राकृत सर्ग 3 (ब्रह्मसर्ग, भूतसर्ग, वैकारिकसर्ग) हैं, वैकृत सर्ग 5 (मुख्य सर्ग, तिर्यक् सर्ग, देव सर्ग, मानुष सर्ग, अनुग्रह सर्ग) हैं और प्राकृत वैकृत एक (कौमार सर्ग) है। इनका विस्तार से विवरण विष्णुपुराण (1.5.) में है।

भूमण्डल की परिभाषा बताते हुये श्रीमद् भागवतपुराण में व्यास कहते हैं कि भूमण्डलयामविशेषो यावदादित्यस्तपति यत्र चासौ ज्योतिषां गणैः चन्द्रमा वा सह दृश्यते। (5/16/1)। अर्थात् सूर्य जितनी दूर तक ताप करता है और जिस स्थान में तारा गणों सहित चन्द्रमा दिखता है उतने विस्तृत स्थान को भूमण्डल कहते हैं। व्यास सप्त द्वीपों के भ्रमण कर्ता हैं। उनके अनुसार जम्बू प्लक्ष, शाल्मलि, कुश, कौंच, शाक और पुष्कर नाम के सप्त द्वीप हैं। इसी प्रकार सप्त समुद्रों का भी ज्ञान देते हैं –लवण, इक्षु, सुरा, घृत, दधि, दुग्ध, जन्म। व्यास का यह कथन वेदों के प्रमाण से अनुप्राणित है–

घृतहस्त्रा मधुकूलाः सुरोदकाः क्षीरेणपूर्णा उदकेन दघ्ना।
एतास्त्वा धरा उपयन्तु सर्वाः स्वर्गे लोके मधुमत्पिन्वमानाः।। (अर्थर्ववेद 4.34.6)।

भूमण्डल का स्पष्ट परिमाण व्यास को ज्ञात है। देवी भागवत में वे लिखते हैं कि अण्डमध्यगतः सूर्यो द्यावा भूम्योर्यदन्तरम्। सूर्याण्डगोलयोर्मध्ये कोट्यः स्युः पंचविंशतिः। (देवी भागवत्–8/14/16–17) ब्रह्माण्ड के सम्पूर्ण परिमाप को बताने वाले इस श्लोक का तात्पर्य यह है कि सूर्य से पच्चीस करोड़ योजन नीचे और सूर्य से पच्चीस करोड़ योजन ऊपर इसी तरह चारों ओर विस्तृत गोल का नाम ब्रह्माण्ड है। व्यास ने इसी गोले के दो विभाग कर के पचास करोड़ योजन के भूगोल के नाम से और उतने ही परिमाण वाले दूसरे गोलार्ध को खगोल के नाम से अभिहित किया है। इस प्रकार भूमण्डल 50 करोड़ योजन का है। पंचाशत कोटि विस्तीर्णा सशैलवनकानना। (विद्येश्वर संहिता 12.2)

पृथ्वी मण्डल का ज्ञान व्यास की यायावरी प्रकृति के कारण सहज दिखता है किन्तु खगोल विद्या का विवरण व्यास को अप्रतिम कोटि में स्थापित करता है। जिसमें उन्होंने सूर्य, चन्द्र आदि ग्रह, राहु, केतु आदि उपग्रह, माया, राशि चक्र, आकाश गंगा, धूमकेतु, उल्कापिण्ड, दिग्दाहक पिण्ड, ध्रुव आदि सर्वविध आकाशचारी अण्ड और पिण्ड का केवल वर्णन ही नहीं अपितु लोक में लोकायित करने के लिए उनकी उत्पत्ति परिवर्तन, गति, विगति आदि रहस्यों को भी सांगोपांग विवेचन भी किया है। प्रत्येक ग्रह उपग्रह का परिमाण, पृथ्वी की दूरी, कितने समय में किस मार्ग से घूमता है, इत्यादि विस्तृत विवेचन है। जिस प्रकार भूमण्डल की सीमा 50 करोड़ योजन है उसी प्रकार ब्रह्माण्ड के दूसरे भाग खगोल का परिमाण

भी 50 करोड़ योजन ही है। भागवत् पुराण में व्यास ने कहा है कि –

> एतेन हि दिवो मण्डलमानं तद्विद उपदिशान्ति। यथा हि द्विदमयोर्निष्पावादीनाम् । (5.21.2)

सृष्टि के संसरण का व्याख्यान करते हुये वे भागवत में कहते हैं कि जब ब्रह्मा ने कर्दम ऋषि को आदेश दिया कि प्रजा उत्पन्न करो, तब वे सरस्वती नदी के तट पर दस सहस्र वर्ष तक तप करते रहे पुनः सृष्टि की –प्रजाः सृजेति भगवान्कर्दमो ब्रह्मणोदितः। सरस्वत्यां तपस्तेपे सहस्राणां समा दश ।। (3.21.6)

इस धरा का पृथ्वी नाम कैसे पड़ा इसका रहस्य बताते हुये व्यास कहते हैं कि महान शक्ति सम्पन्न वेनपुत्र पृथु ने धनुष की नोक से पर्वतों के शिखर विदीर्ण कर इस धरा को समतल किया। असभ्यता के विशाल साम्राज्य को सभ्यता का पाठ पढ़ाना शुरु किया। मनुष्यों में संवेदना के स्वर का आधान किया। प्रजाओं के अन्न दाता प्रजापालक पृथु ने सामान्य जन के लिए तरह – तरह के आवास बनाये, ग्राम, नगर, पुर, अनेक प्रकार के दुर्ग, तालाब, छावनी, खेत, खालिहान, क्यारी, बगीचे, छोटे क्षेत्र, बड़े क्षेत्र आदि अनेक प्रकार से रहने योग्य पृथ्वी बनायी। पृथु से पूर्व इस धरा पर कुछ भी व्यवस्थित रूप न था। पृथु के धरा पर इस उपकार के कारण ही धरा का नाम पृथ्वी पड़ा। यह वर्णन भागवत पुराण के चतुर्थ स्कन्ध में है।

पृथ्वी का विस्तार व्यास की दृष्टि में आमूलचूल समाया हुआ है। महाभारत के आदि में ही जब वे कहते हैं कि धर्मे अर्थे च कामे च मोक्षे च भरतर्षभ। यदिहास्ति तदन्यत्र यन्नेहास्ति न तत्क्वचित्।। (म. भा. 1/62/53) मनुष्य जीवन के चार ही पुरुषार्थ हैं – धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष। अर्थात् महाभारत में मैंने जो कह दिया वही आदि और अन्त है, पूर्व और पश्चिम है। व्यास का भूत ज्ञान अद्वितीय है। उन्होनें अपने काल से पूर्ववर्ती मान्धाता, इक्ष्वाकु, ययाति, वेन, पृथु, नहुष, पुरु, कुरु आदि अनेक सूर्यवंशी एवं चन्द्रवंशी राजाओं का चरित प्रस्तुत किया है। ये राजा भारत के विविध भूखण्डों पर शासन करते रहे हैं। राजाओं का चरित और तात्कालिक सामाजिक जीवन का सांगोपांग विवेचन उनकी यायावरी वृत्ति का परिचय है। पतिव्रता नारियों की कहानी, दान, पुण्य, स्वर्ग, नरक की प्राप्ति के विविध विधान, जीव के शरीर की स्थिति, जन्म, मृत्यु, लोक, शिक्षण आदि विशेष विषयों का विशद विवेचन है। इसीप्रकार पद्मपुराण के सृष्टिखण्ड में सृष्टिवर्णन के क्रम में देव, असुर, मनुष्य आदि की उत्पत्ति, समुद्रमंथन, दक्षयज्ञविनाश तथा मरुतों की उत्पत्ति का विस्तारपूर्वक विवेचन है। व्यास का इतिहास ज्ञान अदभुत है। पृथु, इला, पूरुर्वा, स्यमन्तक इत्यादि के आख्यान, ब्रह्मा का यज्ञ, पुष्कर तीर्थ का चतुर्दिक् माहात्म्य शिव दूती और क्षेमन्करी का आख्यान, कुमार की उत्पत्ति, तारकवध, अनेक देवासुर संग्राम, विविध व्रत, दान, तप, पूजा आदि का विवेचन व्यास को सार्वभौमिक बनाता है। विविध क्षेत्रों में होने वाले लघु वा दीर्घ महोत्सवों की चर्चा करके व्यास आगामी काल के लिए पथ प्रदर्शन करते हुए चलते हैं। भारत वर्ष का सीमांकन भी व्यास ही करते हैं। वे कहते हैं कि समुद्र से उत्तर तथा हिमालय से दक्षिण की ओर जो 9 सहस्र योजन विस्तृत भूमि है वह भारत है। उत्तरं यत्समुद्रस्य हिमाद्रेश्चैव दक्षिणम्। वर्षं तद्भारतं नाम नवसाहस्रविस्तृतम्।। (अग्नि पुराण 118.1)।

तीर्थयात्रा संस्कृतियों के समागम और सामाजिक समरसता का महान प्रकल्प है। अनेक अपसंस्कृतियाँ तीर्थयात्राओं के बाद बिलुप्त हो जाती हैं। भारत में तीर्थों का विशेष महत्व प्रतिपादित करने में व्यास ही अग्रणी हैं। प्राचीन काल से अद्यावधि तीर्थ यात्रा अनेक संस्कृतियों को समझने में सहायक रही है। व्यास को इस सामाजिक रहस्य का पता था इसीलिए भारत के भिन्न–2 स्थलों में स्थापित विविध तीर्थों की महत्ता को प्रतिपादित करते हैं, जिससे सांस्कृतिक गतिविधियाँ सर्वत्र फैलती रहें। अनेक जातियों तथा सम्प्रदायों के अनुयायी लोक धार्मिक भावना से अनुप्राणित होकर तीर्थ स्थलों पर जाते हैं। जहाँ पारस्परिक भेद–भाव की दृष्टि समाप्त हो जाती है और राष्ट्रीय एकता की प्रतिष्ठा होती है। संगच्छध्वं संवदध्वं सं वो मनांसि जानताम् का भाव जागृत होता है। तीर्थाटन व्यास की एक चतुर योजना है। अखण्ड भारत में वे तीर्थों का विशेष महत्व प्रतिपादित करते हुए उनकी बृहद श्रृंखला प्रस्तुत करते हैं। पुष्कर सर्वोत्तम तीर्थ है, वहीं जम्बूतीर्थ भी है। पुष्करं परमं तीर्थं सान्निध्यं हि त्रिसन्ध्यकम्। दशकोटिसहस्राणि तीर्थानां विप्र पुष्करे।।(अग्निपुराण109.05)। पुष्कर में अनेक आश्रम और तीर्थ हैं यथा– तण्डुलिकाश्रम, कण्वाश्रम, कोटितीर्थ, नर्मदातीर्थ, अर्बुदतीर्थ, चर्मण्वती, सिन्धु, सोमनाथ, प्रभास, सरस्वती और समुद्र का संगम, सागरतीर्थ पिण्डारक, द्वारका सकलसिद्धिदायिनी, गोमती, भूमितीर्थ, ब्रह्मतुंग, पंचनदतीर्थ, भीमतीर्थ, गिरीन्द्रतीर्थ, पापनाशिनीदेविका, पुण्यविनाशनतीर्थ, नागोद्भेदतीर्थ, कुमारकोटितीर्थ आदि। (अग्निपुराण 109 वाँ अध्याय) व्यास के अनुसार भारत तीर्थों का ही देश है। चारों दिशाओं में तीर्थ हैं। धर्मतीर्थ, सुवर्णतीर्थ, परमोत्तम गंगाद्वार (हरिद्वार) कनखलतीर्थ पवित्र भद्रकर्णसरोवर, गंगासरस्वतीसंगम, ब्रह्मावर्त, आघार्दन, भृगुतुंग, कुब्जाभ्र, गंगोद्भेद, अघान्तकतीर्थ, वाराणसीतीर्थ, अविमुक्ततीर्थ कपालमोचनतीर्थ तीर्थराजप्रयाग, गोमतीगंगासंगम, राजगृहतीर्थ, पापनाशकतीर्थ, शालिग्रामतीर्थ, वटेशतीर्थ, वामनतीर्थ, उत्तमकलिकासंगतीर्थ, लौहित्यतीर्थ, करतोयातीर्थ, शोण, ऋषभतीर्थ, श्रीपर्वत, कोल्लगिरि, सह्यपर्वत, मलयगिरि, गोदावरी, तुंगभद्रा, कावेरी, वरदा नदी, तापी, पयोष्णी, रेवा, दण्डकारण्य, कालंजर, मुंजवटतीर्थ, सूर्पारक, मन्दाकिनी, चित्रकूट, श्रृंगवेरपुर, अवन्तिकानगरी, अयोध्या, नैमिषारण्य आदि अनेकानेक तीर्थ भारत की संस्कृतियों को अनन्त काल से एकता के सूत्र में बांधे हुए हैं। तीर्थयात्रा आश्रमव्यवस्था का एक महत्वपूर्ण अंग है। इससे सामाजिक विकास के साथ आध्यात्मिक व्यक्तित्व का निर्माण भी होता है। भारतीय मनीषा सर्वदा यह उद्घोष करती रही है कि मनुष्य को सुसंस्कृत बनाने के लिए उसकी आन्तर और बाह्य शुचिता अत्यावश्यक है। तीर्थ पापों एवं दुष्प्रवृत्तियों से मुक्ति की मानसिकता को जन्म देते हैं।

कृष्णद्वैपायनव्यास का भारत चतुर्विध पुरुषार्थों का पालक देश है। पूर्ववर्ती असाधारण व्यक्तित्वों की बहु आयामी प्रतिभा का विस्तार, आचार–विचार और क्रिया–कलाप, तात्कालिक समाज के यथार्थ स्वरुप का उद्भावन व्यास की सहज प्रक्रिया है। प्राचीन भारतीय समाज व्यवस्था का मूल आधार वर्णाश्रम धर्म ही था। इस व्यवस्था के द्वारा भारतीय संस्कृति में भौतिकता और आध्यात्मिकता को अद्भुत ढंग से समन्वित किया गया है। भारतीय उदात्त चरित मनीषी पारमार्थिक और व्यावहारिक अन्तर को सदैव रेखांकित करते रहे हैं। पारमार्थिक सुख की सर्वोत्कृष्टता और नित्यता में दृढ़ आस्था रखते हुए भी वे सांसारिक सुख और कल्याण की उपेक्षा नहीं करते। समाज के संतुलित संचालन के लिए चतुर्वर्ण की उत्पत्ति स्रष्टा की प्रकृति है। चातुवर्ण्यं मया सृष्टं गुणकर्मविभागशः। (गीता 4.13)। चतुर्वर्ण सृष्टि की उत्पत्ति का पौराणिक सिद्धान्त वेदों का अनुगमन है। अन्तर मात्र इतना है कि पुराण में विराट पुरुष के स्थान पर ब्रह्मा की कल्पना की गई है तथा चार वर्णों के ये चतुर्विध विभाजन यज्ञ कर्म के संपादन हेतु किए गए हैं। जैसा कि पद्मपुराण में कहा गया है– यज्ञनिष्पत्ये ब्रह्मा सर्वमेतद् चकार ह। चातुर्वर्ण्यं महाभाग यज्ञसाधनमुत्तमम् ।।

भूमण्डल का विस्तार कितना विशाल है उसका विवरण जानकर हमें आज भी सिर्फ आश्चर्य ही होता है। पृथ्वी का नाप–तोल, व्यास, परिधि, क्षेत्रफल और गुरुत्वाकर्षण की सीमा, पृथ्वी के समस्त पर्वतों की स्थिति, विस्तार, उनकी चोटियों की ऊँचाई, पृथ्वी के गर्भ की गहराई, पृथ्वी पर प्राप्त धातुओं, रत्नों का ब्यौरा, नदियों, सरोवरों, महा–आरण्यों, वनों, उपवनों का सर्वांगपूर्ण वर्णन आज तक के कवियों में केवल कृष्ण द्वैपायन व्यास ही कर सके हैं। पृथ्वी के सप्तद्वीपों का ज्ञान सर्वप्रथम व्यास ही हमें देते हैं। वे द्वीप विष्णु पुराण में इस प्रकार कहे गये हैं– जम्बूद्वीप, प्लक्षद्वीप, शाल्मलिद्वीप, कुशद्वीप, क्रौंचद्वीप, शाकद्वीप और पुष्करद्वीप (विष्णुपुराण 2.4)।

व्यास पर्वतों की गहराई और ऊँचाई के पैमाने से परिचित हैं। मेरु पर्वत 84 योजन ऊँचा है और 16 हजार योजन पृथ्वी के नीचे है। 16 हजार योजन उसका फैलाव है। (लिंग पुराण 48.20) उसी पर्वत पर देवताओं के अनेक महल हैं। सप्तद्वीपा पृथ्वी सभी सात समुद्रों के साथ 50 करोड योजन वाली है। पंचाशतकोटिविस्तीर्णा ससमुद्रा धरा स्मृता।।(लिंग पुराण 49.2)

पृथ्वी के आलम्बन स्वरूप चारों ओर फैले हुये पर्वतों का विवरण देते हुए वायुपुराण में व्यास कहते हैं कि पूर्व दिशा में मन्दर पर्वत है, दक्षिण में गन्धमादन, पश्चिम में विपुल तथा उत्तर में सुपार्श्व है। इसी प्रकार मेरु के चारों ओर नील, श्वेत, श्रृंगी, जठर, देवकूट, निषध, हेमकूट, हिमवान, माल्यवान आदि पर्वतों का स्थान एक दूसरे से दूरी, दिशा, रंग और महत्व प्रतिपादित किया है। (वायु पुराण 1. 35.11,16), (अग्नि पुराण 108.12.12) (कूर्म पुराण 45.15,16)। व्यास की यायावरी वृत्ति उन्हें एक एक छोटे छोटे पहाडों तक ले जाती है, उन छोटे छोटे पर्वतों के नाम सुनकर आज भी हमें हैरानी ही होती है। जैसे– मानस झील के दक्षिण में शैल, विशिर शिखर एकश्रृंग, महाशूल, गजशैल, पिशाचक, पंचशैल, कैलास हिमवत आदि पर्वत हैं। पश्चिम में शितोदझील से पश्चिम में सुरप, महाबल, कुमद, मधुमान, अंजन, मुकुट, कृष्ण, पंण्डुर, सहस्रशिखर, पारिजात, और श्रीश्रृंग हैं। इसीप्रकार महाभद्र झील के उत्तर में शंखकूट, महाशैल, वृषभ, हंसपर्वत, नाग, कपिल, इन्दंशैल, सानुमान, नील, कंटक, श्रृंग शतश्रृंग, पुष्पकोश, प्रशैल, विरज, वराह, मयूर और जारुचि पर्वत हैं। व्यास की यायावरी वृत्ति जब उन्हें शकद्वीप ले जाती है तो वे बताते हैं कि वहाँ सात नदियाँ हैं– सुकुमारी, कुमारी, नन्दा, शिविका, इक्षु, वेणुका, और सुकृता। वहाँ चार प्रकार की जातियाँ निवास करती हैं। कुछ सभ्य हैं कुछ असभ्य। तत्र पुण्या जनपदाश्चतुर्वर्णसमन्विताः। मगाश्च मगगाश्चैव गानगा मन्दगास्तथा। (भविष्य पुराण 1.139)। ऐसे ही एशिया की सप्त नदियों का विवरण व्यास गंगा की सप्त धारा के रूप में मत्स्य पुराण (121.42) एवं वायु पुराण (47.37–51) में दिया है। प्लक्ष द्वीप के विषय में बताते हैं कि वहाँ भी सात बडे पर्वत हैं। यथा– गोमेदक, चान्द्र, तारक, दुंदुभि, सोमक, सुमनह, वैभ्राज। शाल्मलि द्वीप का विवरण देते हुए कहते हैं कि वहाँ भी कुमुद, उत्तम, बलाहक, द्रोण कंक, महिष, और ककुद्मान नामक सात पर्वत हैं। कुश द्वीप में सात उपद्वीप हैं। जिनके नाम इसप्रकार हैं– विद्रुम, हेमपर्वत, द्युतिमान, पुष्पित, कुशेशय, हरिगिरि, और मंदर पर्वत। इसीप्रकार क्रौंचद्वीप की महिमा भी बताते हैं। इन सब का विस्तार पूर्वक विवेचन लिंग पुराण के 52 वें अध्याय में है।

पृथ्वी की भौगोलिक यात्रा के साथ व्यास उर्ध्व लोक और पाताल लोकगामी हैं। उनका और्ध्विक ज्ञान भी अतुलित है। उर्ध्वलोकों का विवरण देते हुए कहते हैं कि सत्य, तपः, जनः, महः, स्वः, भुवः, भू ये सात उर्ध्वलोक हैं। इनमें सर्वोपरि सूर्य मण्डल की दूरी पृथ्वी तल से एक सौ हजार योजन है। उसके ऊपर सूर्य का रथ सोलह हजार योजन है। मेरु पृथ्वी तल से 84 हजार योजन है। यह लोक ध्रुव लोक से एक करोड़ योजन ऊपर है। जन लोक महः लोक से 2 करोड़ योजन है। तपो लोक जन लोक से चार करोड़ योजन ऊपर है। उससे भी छः करोड़ योजन ऊपर ब्रह्म लोक है। (लिंग पुराण का अध्याय 53) पृथ्वी तल से नीचे के लोकों का विवरण देते हुए कहते हैं कि अतल, वितल, सुतल, तलातल, रसातल, महातल, पाताल ये अधोलोक हैं। इन सबका विस्तार पूर्वक विवेचन विष्णु, वायु एवं भागवत पुराणों में है। पाताल आदि का वर्णन कल्पना प्रसूत नहीं अपितु अनुभवाश्रित है। पाताल आदि का जो लक्षण व्यास बताते हैं वह वर्तमान युग में भी द्रष्टव्य है। व्यास के पाताल विषयक सांकेतिक व्याख्यान को आधार बनाकर बलदेव उपाध्याय ने अपने पुराण विमर्श नामक ग्रन्थ में विस्तार से शोधपरक विवेचन प्रस्तुत किया है।

प्राचीन विज्ञान की झलक मात्र से आधुनिक विज्ञान चमत्कृत हो उठता है। जैसे – अश्वशास्त्र (इसके अन्तर्गत अश्वों के सामान्य परिचय, उनको चलाने के प्रकार रोग, उपचार आदि का विस्तृत विवेचन है) (सभा पर्व 5.109), आयुर्वेद (गरुड़ पुराण अध्याय 146 से 202 तक) रत्न परीक्षा (गरुड़ पुराण अध्याय 68 से 80 तक) वास्तुविद्या (मत्स्य पुराण अध्याय 252 से 270 तक एवं अग्नि पुराण में भी), सामुद्रिक शास्त्र (अग्निपुराण अध्याय 243 से 245 तक) धनुर्विद्या (अग्निपुराण अध्याय 249 से 252 तक) अनुलेपनविद्या (मार्कण्डेय पुराण अध्याय 61 श्लोक 8 से 20 तक) स्वेच्छारूपधारिणीविद्या (मार्कण्डेयपुराण अध्याय 2) अस्त्रग्रामहृदयविद्या (मार्कण्डेयपुराण अध्याय 63) सर्वभूतरुतविद्या (मार्कण्डेयपुराण अध्याय 64 एवं मत्स्यपुराण अध्याय 20) पद्मिनीविद्या (मार्कण्डेयपुराण अध्याय 64) रक्षोघ्नविद्या (मार्कण्डेयपुराण अध्याय 70) जालन्धरी विद्या (पद्मपुराण पाताल खण्ड अध्याय 37) गोपालविद्या (पद्मपुराण पाताल खण्ड अध्याय 41) पराबाला विद्या (पद्मपुराण पाताल खण्ड अध्याय 43) पुरुषप्रमोहिनीविद्या (पद्मपुराण भूमिखण्ड अध्याय 34) उल्लापन विधानविद्या (विष्णु पुराण 5.20.9) देवहूतिविद्या (भागवत्पुराण 9.24. 32) युवकरणविद्या (भागवत्पुराण 9.22.11) वज्रवाहनिकाविद्या (लिंगपुराण अध्याय 51) सिंहविद्या (अग्निपुराण 43.13) नरसिंहविद्या (अग्नि पुराण 63.03) गान्धारीविद्या (अग्निपुराण 124.12) मोहिनीविद्या एवं जृम्भणी विद्या (अग्नि पुराण 323.4–20) अन्तर्धान विद्या (भागवत्पुराण 4.15.15) वैष्णवीविद्या (भागवत्पुराण 6.8) त्रैलोक्यविजयविद्या (ब्रह्मवैवर्तपुराण गणेशखण्ड 30.1–32) आदि अनेक रहस्यमयी और विचित्र विद्यायें व्यास की लेखनी के चमत्कार हैं, जिन पर अब भी गम्भीर अनुसंधान की अपेक्षा है।

व्यास का भविष्य चिन्तन भी अद्भुत है। हम जिस युग में जी रहे हैं उस कलियुग की लोकवृत्ति का दिग्दर्शन व्यास ने हजारों वर्ष पूर्व ही कर दिया था। लिंग पुराण के चालीसवें अध्याय में वे बताते हैं कि इस युग में आलस्य, रोग, भूख, भय सर्वदा रहेगा। अलग अलग विद्रोह, पाप, पुण्य, अधर्म, आचारहीनता, संकीर्ण विचार, महाक्रोध, आदि सहज देखने को मिलेगा। सच्चरित्रता का अभाव होगा, वर्ण और आश्रम व्यवस्था विच्छिन्न हो जायेगी इत्यादि कलि स्वभाव का विशद विवेचन प्रस्तुत किया है। आज हम जिस वैज्ञानिक प्रगतिशीलता के दौर में जी रहे हैं इस में मनुष्यों का नैतिक पतन भी हुआ है। व्यास हमें अपनी कुशलता से निरन्तर सचेत करते आ रहे हैं।

अन्ततः तात्पर्य यह है कि महर्षि व्यास का महापथिकत्व मनुष्य की विलक्षण बुद्धि से भी अगम्य है। वेदव्यास घोर तिमिर के मणिदीप हैं जिनका प्रकाश किसी भी झंझावात से प्रभावित नहीं हो सकता। व्यास का साहित्य अनिंद्य सौन्दर्य का प्रतिमान है। वे समस्त मानवीय सांस्कृतिक परम्पराओं के स्वच्छ प्रतिबिम्ब हैं। सहस्राब्दियों के गौरवमय इतिहास, ज्ञान, विज्ञान और सभ्यता के मूल तत्वों को व्यास ने सामाजिक, सांस्कृतिक एवं भावनात्मक एकता के सूत्र में बाँधकर मानव के कल्याण के लिए चिरन्तन और जीवन्त रखा है। ऐसे सार्वकालिक एवं सार्वदेशिक उत्थान की परिकल्पना के महान सूत्रधार महामानव कृष्णद्वैपायन व्यास का उपजीव्यत्व अनन्त काल तक अभिनन्दनीय है।